

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 12 अध्याय 3: भूमि-गीता, पृथ्वी का गीत

14 September 2026



धरती माता उन राजाओं पर शान्त भाव से हँसती हैं जो उसे जीतने के लिए भागदौड़ करते हैं, यह जानते हुए कि वे मृत्यु के हाथों के खिलौने-मात्र हैं — और इसी गम्भीर दृष्टि से श्रीशुकदेव गोस्वामी राजा परीक्षित को कलियुग में छिपे उस एक महान् कोष की ओर ले चलते हैं: भगवान् के पावन नाम का कीर्तन।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

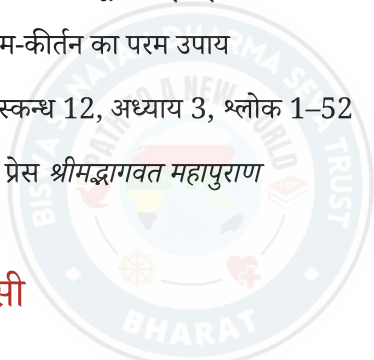
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। कलि के वंशों की दीर्घ शृंखला को उघाड़ने और युग के लक्षणों को उजागर करने के पश्चात्, श्रीशुकदेव गोस्वामी अब राजा परीक्षित की दृष्टि को राज्यों की नियति से उठाकर उनके नीचे छिपे गहरे प्रश्नों की ओर ले जाते हैं: समस्त सांसारिक विजय का मूल्य क्या है, धर्म युग-दर-युग किस प्रकार बदलता है, और — चारों युगों में सबसे अन्धकारमय युग में — कोई आत्मा फिर भी किस प्रकार उद्धार पा सकती है? द्वादश स्कन्ध का यह तृतीय अध्याय सम्पूर्ण शास्त्र के सर्वाधिक विलक्षण चित्रों में से एक से आरम्भ होता है: स्वयं धरती माता, उन शासकों की अन्तहीन पंक्ति पर चुपचाप हँसती हुई जो उसे पाने के लिए लड़ते और मरते हैं। उस हँसी से श्रीशुकदेव महत्वाकांक्षा की व्यर्थता, युगों के फेरे, और कलि-युग के

संकटों की एक शिक्षा निकालते हैं — और फिर, जब चित्र सर्वाधिक अन्धकारमय प्रतीत होता है, वे युग की एकमात्र, अमूल्य कृपा प्रकट करते हैं: कि केवल श्रीकृष्ण के नामों का कीर्तन करने-मात्र से मनुष्य समस्त बन्धन से पार हो जाता है। यह एक ऐसा अध्याय है जो प्रत्येक सांसारिक तृष्णा से हाथ खाली कराकर उन्हें केवल नाम से भर देता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 12 (द्वादश स्कन्ध — अन्तिम स्कन्ध)
- अध्याय: 3 (तृतीय अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: भूमि-गीता, पृथ्वी का गीत
- मुख्य वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को सम्बोधित करते हुए; सूत गोस्वामी की नैमिषारण्य के ऋषियों को कही कथा के भीतर
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित; तथा नैमिषारण्य के ऋषिगण
- मुख्य स्थान: गंगा का तट, जहाँ परीक्षित अपनी मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे हैं, नैमिषारण्य के वन-आश्रम के भीतर
- मुख्य विषय-वस्तु: धरती माता द्वारा गाई गई सांसारिक विजय की व्यर्थता, चारों युगों का स्वरूप एवं आचरण, कलियुग के दोष, तथा भगवान् के पावन नाम-कीर्तन का परम उपाय
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 12, अध्याय 3, श्लोक 1-52
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



धरती माता की हँसी

श्रीशुकदेव एक विलक्षण दृश्य का स्मरण करते हुए आरम्भ करते हैं: सम्पूर्ण पृथ्वी, राजाओं को उसे जीतने के लिए इतना व्यग्र और अधीर देखकर, उन पर हँसती है।

श्रीशुक उवाच

दृष्ट्वात्मनि जये व्यग्रान् नृपान् हसति भूरियम् ।

अहो मा विजिगीषन्ति मृत्योः क्रीडनका नृपाः ॥ १ ॥

śrī-śuka uvāca dṛṣṭvātmani jaye vyagrān nṛpān hasati bhūr iyam aho mā vijigīṣanti mṛtyoḥ kṛīḍanakā nṛpāḥ

अर्थ: श्रीशुक ने कहा: राजाओं को उसे जीतने के लिए इतना उत्सुक देखकर, यह पृथ्वी हँसती है और कहती है: कितना आश्चर्य है कि ये राजा, जो मृत्यु के हाथों के खिलौने-मात्र हैं, मुझे जीतना चाहते हैं! (स्कन्ध 12, अध्याय 3, श्लोक 1)

व्यर्थ है, धरती माता कहती हैं, उन शासकों की महत्वाकांक्षा जो जल के बुलबुले-सी क्षणभंगुर देह पर सब कुछ दाँव पर लगा देते हैं, यह जानते हुए भी कि वह अवश्य फूटेगी। वे पहले अपनी इन्द्रियों को, फिर अपने शत्रुओं को, फिर एक-एक कर समुद्र के तटों तक महाद्वीपों को जीतने की योजना बनाते हैं — और इस पूरे समय अपने पार्श्व में खड़ी मृत्यु को नहीं देख पाते। उनकी विजयों से कितना क्षुद्र प्रतिफल मिलता है, जबकि आत्मा को वश में करने का सच्चा पुरस्कार साम्राज्य नहीं, अपितु मोक्ष है।



राजा एक-दूसरे से पृथ्वी के लिए विवाद करते हैं, प्रत्येक घोषणा करता है "यह पृथ्वी मेरी है, तुम्हारी नहीं", जबकि धरती माता उनकी क्षणभंगुर महत्वाकांक्षा पर हँसती हुई देखती हैं (श्लोक 5-8)।

तब धरती माता वह नामावली कहती हैं जो समस्त अभिमान को मौन कर देती है। पृथु, पुरुरवा, गाधि, नहुष, भरत, कार्तवीर्य अर्जुन, मान्धाता, सगर, राम, खट्वांग, रघु, ययाति, भीमरथ, और अनेक अन्य — महान् सम्राट् जो सब कुछ समझते थे, वीर तथा अजेय थे, और उसे अपना कहते थे। हिरण्यकशिपु, रावण, तथा हिरण्याक्ष जैसे दैत्य भी उसे अपनी पकड़ में रखते थे। फिर भी स्वभाव से मरणशील, उनमें से हर एक अन्ततः मृत्यु द्वारा एक कथा के विषय-मात्र में बदल दिया गया, उनकी योजनाएँ अधूरी छूट गईं। यही कारण है, श्रीशुकदेव परीक्षित से कहते हैं, कि ऐसी कथाएँ कही जाती हैं: विजय की महिमा के लिए नहीं, अपितु यह प्रकट करने के लिए कि सांसारिक भोग वस्तुतः कितने असार हैं। साम्राज्य की बातों का परम सत्य से कोई सम्बन्ध नहीं; किन्तु भगवान् विष्णु की महिमाएँ, जिनका सन्तजन अनवरत गान करते हैं, समस्त पाप का अन्त कर देती हैं, और शुद्ध भक्ति के अभिलाषी को उन्हें प्रतिदिन सुनना चाहिए।

चारों युगों का फेरा

इस दृष्टि से द्रवित होकर, परीक्षित पूछते हैं कि कलि में जीने वाले मनुष्य युग के संचित दोषों को किस प्रकार दूर कर सकते हैं, और श्रीशुकदेव से चारों युगों के स्वरूप, प्रत्येक के उचित आचरण, तथा काल — भगवान् की वह शक्ति जो विश्व के शासकों को भी संचालित करती है — के कार्य-व्यापार को समझाने की प्रार्थना करते हैं।

श्रीशुकदेव एक भव्य व्यापकता के साथ उत्तर देते हैं। सत्ययुग में धर्म अपने चारों चरणों पर दृढ़ खड़ा रहता है — सत्य, दया, तप, और दान — और लोग सन्तुष्ट, सौम्य, शान्त, तथा आत्म-साक्षात्कार में लीन रहते हैं। त्रेता में धर्म का एक चरण लुप्त हो जाता है, ज्यों-ज्यों उसके विपरीत गुण भीतर सरकते हैं; लोग कर्मकाण्ड तथा पुण्य, धन एवं भोग की ओर मुड़ जाते हैं। द्वापर में सद्गुण पुनः आधा रह जाता है; मनुष्य यश, महान् यज्ञों, तथा बड़े परिवारों के प्रति आसक्त हो जाते हैं। और कलि में धर्म का केवल एक चरण शेष रहता है, जो निरन्तर क्षीण होता जाता है, ज्यों-ज्यों लोभ, क्रूरता, कपट, तथा अशान्ति अपनी पकड़ बना लेते हैं।



श्रीशुकदेव चारों युगों का वर्णन करते हैं, जिनमें धर्मरूपी वृषभ क्रमशः चार, तीन, दो, और अन्ततः एक ही चरण पर खड़ा रहता है, ज्यों-ज्यों सत्य, दया, तप, और दान क्षीण होते हैं (श्लोक 18-25)।

ऋषि एक सूक्ष्म शिक्षा जोड़ते हैं: प्रकृति के तीन गुण — सत्त्व, रज, और तम — काल के बल से मानव-मन में उठते और गिरते हैं, और वास्तव में यही आन्तरिक सन्तुलन इस बात का चिह्न है कि कौन-सा युग उपस्थित है। जहाँ मन सत्त्व से परिपूर्ण होकर ज्ञान तथा तप में रमता है, वहाँ भीतर सत्ययुग राज करता है; जहाँ लोभ, असन्तोष, तथा पाखण्ड प्रबल होते हैं, वहाँ कलि है, बाहरी पंचांग चाहे जो कहे। इस प्रकार हममें से प्रत्येक चारों युगों को अपने भीतर धारण करता है, और क्षण-क्षण चुन सकता है कि उसका हृदय किस युग में निवास करेगा।

अन्धकार-युग का एक महान् सद्गुण

कलि-युग को कठोर रंगों में चित्रित करने के पश्चात्, श्रीशुकदेव, जैसा उन्हें प्रिय है, निदान से मुड़कर उपचार की ओर आते हैं। अन्धकार चाहे जितना घना हो, वे कहते हैं, भगवान् श्रीहरि, एक बार मन में विराजमान होकर, युग से उत्पन्न प्रत्येक दोष को दूर भगा देते हैं। श्रवण, कीर्तन, स्मरण तथा पूजन किए जाने पर, भगवान् हृदय में निवास करते हैं और हजारों जन्मों के पापों को जला देते हैं, जैसे स्वर्ण पर लगाई गई अग्नि उसकी प्रत्येक अशुद्धि को भस्म कर देती है। और तब वे वह श्लोक कहते हैं जो सम्पूर्ण युग का दीपक बन गया है।

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।

कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत् ॥ ५१ ॥

kaler doṣa-nidhe rājann asti hy eko mahān guṇaḥ kīrtanād eva kṛṣṇasya mukta-saṅgaḥ paraṁ vrajet

अर्थ: हे राजन्, यद्यपि कलि-युग दोषों का सागर है, तथापि इसमें एक महान् गुण है: श्रीकृष्ण के नामों तथा महिमाओं का कीर्तन करने-मात्र से मनुष्य समस्त बन्धन से मुक्त होकर परम पद को प्राप्त हो जाता है। (स्कन्ध 12, अध्याय 3, श्लोक 51)



श्रीशुकदेव कलि-युग की एकमात्र महान् कृपा प्रकट करते हैं: कि केवल श्रीकृष्ण के पावन नामों का कीर्तन करने-मात्र से आत्मा समस्त बन्धन से पार हो जाती है (श्लोक 45-52)।

इस अनुग्रह को और स्पष्ट करने हेतु, श्रीशुकदेव चारों युगों की तुलना करते हैं। अन्य तीन युगों में साधक को गहन तपस्या, विस्तृत कर्मकाण्ड अथवा नियमित मन्दिर-सेवा द्वारा जो फल अर्जित करना पड़ता था, वही फल इस घोर कलि-युग में भगवान् के नामों का सहज संकीर्तन करने मात्र से सुलभ हो जाता है।

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥ ५२ ॥

kṛte yad dhyāyato viṣṇum tretāyām yajato makhaiḥ dvāpare paricaryāyām kalau tad dhari-kīrtanāt

अर्थ: जो सत्ययुग में विष्णु का ध्यान करने से, त्रेता में यज्ञ द्वारा उनकी उपासना से, तथा द्वापर में विधिपूर्वक सेवा से प्राप्त होता है, वही कलि-युग में केवल श्रीहरि की महिमाओं का कीर्तन करने-मात्र से प्राप्त हो जाता है। (स्कन्ध 12, अध्याय 3, श्लोक 52)

यह एक विस्मयकारी उलटफेर है। ठीक वही युग जो बल, स्मृति, तथा दीर्घायु को छीन लेता है — वह युग जिसमें पूर्व-कालों के विस्तृत अनुशासन अधिकांश मानव की पहुँच से परे हैं — उसे समस्त मार्गों में सबसे सरल तथा सर्वाधिक शक्तिशाली मार्ग दिया गया है: स्वयं नाम, जो प्रत्येक जिह्वा तथा प्रत्येक हृदय के लिए निर्बाध रूप से सुलभ है।

इस अध्याय को मुख्य शिक्षाएँ

1. समस्त सांसारिक विजय मृत्यु का खिलौना है। धरती माता की हँसी क्रूरता नहीं, अपितु करुणा है: वे हमें स्मरण कराती हैं कि प्रत्येक मुकुट धूल में लौट जाता है, ताकि हम अपने हृदय को वहाँ लगाएँ जहाँ कुछ भी खोया नहीं जा सकता (श्लोक 1-13)।
2. महान् राजाओं की कथाएँ दर्पण हैं, ट्रॉफियाँ नहीं। श्रीशुकदेव ये इतिहास वैराग्य सिखाने के लिए कहते हैं, प्रशंसा के लिए नहीं — क्योंकि सबसे बलशाली भी अन्ततः “कथा के विषय-मात्र” में सिमट गए (श्लोक 14)।
3. युग हृदय के भीतर निवास करता है। चूँकि सत्त्व, रज, और तम मन में उठते और गिरते हैं, हम बाहरी कलि-युग के चलते रहने पर भी सद्गुण एवं ज्ञान का आन्तरिक सत्ययुग विकसित कर सकते हैं (श्लोक 26-29)।
4. पावन नाम ही युग की कृपा है। कलि का एक महान् गुण यह है कि मोक्ष, जो पूर्व-कालों में इतना कठिनता से मिलता था, अब केवल श्रीकृष्ण के नामों का कीर्तन करने-मात्र से सुलभ है (श्लोक 51-52)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के क्रम में एक कोमल तर्क है। श्रीशुकदेव पहले हमारे हाथों को प्रत्येक मिथ्या कोष से खाली करते हैं — हमें राजा तथा दैत्य समान रूप से मृत्यु द्वारा निगले जाते हुए, और स्वयं पृथ्वी को हमारी योजनाओं पर सौम्यता से हँसते हुए दिखाते हैं — और तभी वे उन खाली हाथों में वह एक वस्तु रखते हैं जो कभी छीनी नहीं जा सकती। यही समस्त सच्ची भक्ति की गति है: हम नाम को तब तक नहीं थामते जब तक हम पहले प्रत्येक अन्य वस्तु पर अपनी पकड़ ढीली नहीं कर लेते। और जो कृपा वे प्रकट करते हैं वह अपनी समता में विस्मयकारी है। पूर्व-कालों के अनुशासन अवकाश, बल, विद्या, तथा दीर्घायु की माँग करते थे — ऐसे उपहार जो असमान रूप से दिए गए। किन्तु नाम केवल प्रेम माँगता है। निर्धन उसे उतनी ही पूर्णता से गा सकता है जितना धनी, अनपढ़ उतनी ही जितना विद्वान्, मरणासन्न उतनी ही जितना तरुण। जिस युग को श्रीशुकदेव दोषों का सागर कहते हैं, उसमें यही एकमात्र उज्ज्वल मोती है: कि परम पद का द्वार उस हर व्यक्ति के लिए खोल दिया गया है जो केवल भगवान् को पुकारने को तैयार है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, धरती माता की सौम्य हँसी को हृदय में धारण करें। किसी एक वस्तु पर ध्यान दें जिसे “जीतने” के लिए आप व्यग्रता से प्रयत्नशील हैं — कोई सम्पत्ति, कोई पद, किसी अन्य पर कोई छोटी विजय — और शान्ति से स्वीकार करें कि वह भी मृत्यु का खिलौना है, इस जीवन के परे आपके साथ नहीं जा सकती। फिर, उस पकड़ को थोड़ा-सा भी ढीला करते हुए, अपनी जिह्वा को उस कोष की ओर मोड़ें जो चिरस्थायी है: धीरे-धीरे, ध्यानपूर्वक जप करें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” अथवा श्रीकृष्ण के नाम, एक निश्चित संख्या में। इस एक कार्य में आप अध्याय की समस्त शिक्षा का अभ्यास करते हैं — क्षणभंगुर पर अपनी पकड़ ढीली करते हुए, और युग के एक महान् गुण को अपना बनाते हुए।

उपसंहार

द्वादश स्कन्ध का तृतीय अध्याय हमें धरती माता की हँसी से पावन नाम के दीपक तक ले जाता है। श्रीशुकदेव गोस्वामी पहले सांसारिक स्थायित्व के प्रत्येक भ्रम को हटा देते हैं — राजा, साम्राज्य, और यहाँ तक कि प्रबल दैत्य भी मृत्यु के हाथों मात्र कथाओं में विलीन होते हुए — और फिर चारों युगों में धर्म के दीर्घ अवरोहण का अनुरेखण करते हैं, जब तक कि कलि का अन्धकार पूर्णतः प्रकट न हो जाए। फिर भी अध्याय

का सच्चा प्रयोजन भयभीत करना नहीं, अपितु मुक्त करना है: क्योंकि ठीक सर्वाधिक दुर्बलता के युग में, भगवान् ने अपनी सबसे बड़ी कृपा छिपा रखी है। जहाँ पूर्व-कालों में ध्यान, यज्ञ, तथा विस्तृत उपासना अपेक्षित थी, वहाँ कलि केवल श्रीकृष्ण के नामों का कीर्तन माँगता है, जिसके द्वारा कोई भी आत्मा जन्म-मृत्यु के सागर से पार हो सकती है। यह भागवत का महान् सार्वजनीन उपहार है — पृथ्वी का गीत, जो विलाप में नहीं, अपितु नाम के गान में समाप्त होता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (सम्पूर्ण), द्वादश स्कन्ध, तृतीय अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ॰ श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-12-adhyay-3-bhumi-gita-prithvi-ka-git-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट